# व्यावसायिक विकास की चुनौतियाँ

सी.ए. राजेश जैन

ऐसा क्यों होता है कि ज्यादातर व्यवसायों का विकास एक हद के बाद या तो रुक जाता है या वह असफल हो जाते हैं? सफल होना तो सभी चाहते हैं। पर विकास के साथ जो जटिलताएं आती हैं, हर कोई उससे जूझ नहीं पाता। कोई साइकिल चालक किसी एक स्थान पर ज्यादा देर तक खड़े रहने का चुनाव नहीं कर सकता है। उसे या तो आगे बढ़ते जाना है या फिर वह गिर जाएगा। वैसे ही व्यवसाय में प्रयास तो निरंतर विकास का ही करना पड़ता है। अन्यथा प्रतिस्पर्धा, बदलती तकनीक, ग्राहक की बदलती इच्छाएं आदि तथ्य किसी भी स्थिर व्यवसाय को बर्बाद कर सकते हैं। व्यावसायिक जगत में स्थिरता का ख्याल मात्र ही एक धोखा है। परिवर्तन में ही स्थिरता पाई जा सकती है।

एक अपरिपक्व व्यक्ति सफलता के रास्ते को बिल्कुल सीधा देखता है। उसे बचपन से यह सिखाया जाता है कि रास्ते में कोई भी बाधा या ठोकरें आएं, सभी को पार कर सफलता हासिल करनी है। मेहनत, और भी कड़ी मेहनत करनी है। जिस तरीके को अपनाकर सफलता मिल रही है, उसे और भी ज्यादा गहराई या दृढ़ता से करना है। ऐसे में वो ज्यादा से ज्यादा, और भी ज्यादा उसी चीज को करता है और वैसे ही करता है जैसे वह करता आ रहा है। हमारी वर्तमान शिक्षा पद्धति इस व्यवहार और मानसिकता को प्रोत्साहित भी करती है और उसका इनाम भी देती है।

एक निश्चित पाठ्यक्रम (Fixed Syllabus) में निश्चित तरीके से अव्वल आने के लिए तो यह तरीका अच्छा है पर इससे सृजनात्मक और लचीली सोच, जो किसी भी असामान्य परिस्थिति से निपटने के लिए आवश्यक है, विकसित नहीं हो पाती। व्यक्ति जीवन तथा व्यवसाय की विषमताओं के लिए खुद को तैयार नहीं रख पाता है। दरअसल व्यावसायिक विकास का रास्ता हवा में उड़ने या समुद्र में सफर करने की तरह नहीं है जो अक्सर सीधा होता है। यह तो पहाड़ चढ़ने की तरह है या कहें तो सीढ़ी चढ़ने की तरह है। हम सीढ़ी चढ़ते वक्त कुछ दूर एक दिशा में चलते हैं। फिर बीच में समतल स्थान आता है और फिर हम विपरीत दिशा में घूम जाते हैं। व्यावसायिक विकास का सफर भी कुछ इस तरह का ही है। जिस तरीके को अपना कर हम वर्तमान स्थिति में पहुंचे हैं, वो तरीका हमें और आगे ले जाएगा ये जरूरी नहीं है। जो व्यवसाय प्रथम सीढ़ी के संस्थापक चला रहे हों, उनमें सामान्यत: जो विशेषताएं पाई जाती हैं ,वे हैं :

**अत्यधिक आसक्ति** : संस्थापक इस हद तक व्यापार में डूबे रहते हैं कि अक्सर व्यापार के बाहर उनके जीवन में और कोई भी प्राथमिकता या शौक नहीं होता है।

**सीधा व्यक्तिगत नियंत्रण** : वे हर काम अपने हाथों से करना पसंद करते हैं या सभी कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। वे परिवार के अन्य सदस्यों के जीवन पर भी पूर्ण नियंत्रण रखना चाहते हैं।

**भावनात्मक निर्णय पद्धति** : उनके निर्णय अक्सर तथ्यों पर नहीं बल्कि भावना या उनकी अपनी व्यक्तिगत समझ पर निर्भर होते हैं। उनकी कार्य प्रणाली भी अक्सर अनौपचारिक होती है।

**पूँछ की परवाह** : अपनी अज्ञानता में वे अक्सर हाथी जैसा बड़ा नुकसान भी निकल जाने देते हैं और बर्दाश्त भी कर लेते हैं। अन्यथा उनका ध्यान अक्सर पूँछ पर फंसा रहता है। यानी वो छोटे-मोटे खर्चों को बचाने में ही अपना बहुमूल्य समय लगा देते हैं।

**परफेक्शनिष्ट** (Perfectionist): वे हर कार्य को बड़ी लगन से करते हैं और दूसरों से भी पूर्णता की अपेक्षा रखते हैं। इसी कारण वे दूसरों के काम में अक्सर मीन-मेख निकालते रहते हैं।

**चापलूस साथी** : व्यावसायिक सफलता के साथ चापलूसों की फौज का एकत्रित होना स्वाभाविक है। अक्सर संस्थापक कुछ खास लोगों की बातों पर बिना तहकीकात ही विश्वास कर लेते हैं। ये खास लोग बहुत अच्छी तरह से समझते हैं कि इन संस्थापकों को क्या सुनना पसंद है और क्या नहीं और इस बात का भरपूर लाभ लेते हैं। एक तरफ तो वे अपने वफादार मुलाजिमों की पूरी देखभाल करते हैं दूसरी तरफ वो दूसरों की बात को संवेदना के साथ या ध्यानपूर्वक नहीं सुनते और अक्सर दूसरों की भावनाओं की अनजाने ही उपेक्षा भी कर जाते हैं। ऐसी और अन्य कुछ विशेषताएं संस्थापकों के लिए प्रारंभिक भूमिका में अक्सर शक्ति का काम करती हैं। पर जैसे-जैसे व्यवसाय का विस्तार होता जाता है, उन्हें अपने व्यवसाय को संयोजित (consolidate) करने पर ध्यान देना पड़ता है। और तत्पश्चात कई मामलों में एक विपरीत पद्धति अपनानी पड़ सकती है। उनमें से कुछ बदलाव इस प्रकार हैं :

अनौपचारिक कार्य प्रणाली से औपचारिकता की ओर; अपने हाथ से सीधे नियंत्रण के बजाय दिमाग से दूर रहकर भी संचालन; भावना प्रधान की जगह तथ्य प्रधान निर्णय पद्धति; संचालक भूमिका (Management role) से निवेशक या मालिकाना भूमिका (Investor or owner role) की ओर; पारिवारिक व सामाजिक संबंधों से बाहर विश्वास की सीमाओं का विस्तार और पेशेवर कर्मचारियों एवं सलाहकारों पर निर्भरता। विडंबना ये है कि अधिकांश संस्थापक इस आवश्यक परिवर्तन को नेतृत्व प्रदान नहीं कर पाते, इसलिए अक्सर एक स्तर के बाद उन्हें विकास नहीं विनाश का सामना करना पड़ता है। कहीं-कहीं अगर दूसरी पीढ़ी जागरूक है और आपसी सामंजस्य है तो संस्था इस परिवर्तन को अपना लेती है। हालांकि परंपरा के समर्थक इस अनुभव को सहजता से स्वीकार नहीं करते। बिरले संस्थापक ही ऐसे होते हैं जो अपने जीवन काल में स्वयं अपने नेतृत्व से अपने द्वारा निर्मित इन विलक्षण संस्थाओं को निरंतर सृजनात्मक नवीनता प्रदान करते रहते हैं। आवश्यकता मात्र समान दिशा में अत्यधिक मेहनत की नहीं है। आवश्यकता वक्त के अनुसार विधि एवं दिशा बदलने की है।

**(लेखक मैनेजमेंट, फाइनेंस एवं फैमिली बिजनेस के मशहूर सलाहकार हैं।**